अभेद दृष्टि : कल्याण का मार्ग

ॐ-----------------------ईश्वर के मुतलिक कहता है--अणो रणीयान् महतो महीयान्। वह बारीक से बारीक है और महान् से महान्। सबसे बड़ा------.महान् से बाहर कोई नहीं हो सकता। वही वृहत् है। महान का मतलब है सबसे बड़ा। इससे बड़ा कोई नहीं हो सकता। उसी को ब्रहम कहता है। सो वह बारीक से बारीक और महान् से महान्----. अणु से अणु और महान् से महान्----------.।

ये बात तो परस्पर विरोधी है, ऐसा प्रतीत होता है। वास्तव में ऐसा नहीं है। प्रतीत ही होता है। इसका मतलब हमें गहराई में सोचना है। शंका मनुष्य के मन में उठता है। उठे बिना रह नहीं सकता। एक उदाहरण है। एक दीया जलाकर हम हज़ारों दीयों को जलाते हैं। हजारों दीयों को जलाकर भी जो पूर्व दीवा है, उसमें उतनी ही शक्ति रहती है। किसी भी रूप में उसमें कोई कमी नहीं आती। अतः महान् से महान् वो हो गया। हज़ारों दीवे उससे जल चुके हैं और बारीक से बारीक वह है। हजारों, लाखों, करोड़ों दीवों के रूप में तमाम सृष्टि में फैल सकता है। वह एक मामूली माचिस की तीली के भीतर छुपा हुआ अग्नि तमाम सृष्टि के भीतर फैल सकता है। वैसे इस माचिस के भीतर छुपा हुआ अग्नि बिल्कुल बारीक है। लेकिन वह तमाम संसार को फूँकने के बावजूद, कम नहीं होता है। वह उतना ही रहता है। इसी प्रकार वह महान् तत्व जो सृष्टि के भीतर छुपा है, बारीक से बारीक है। वास्तव में वह छोटा नहीं है। उससे अरबों शक्लें बन जाएगा तो भी उसमें कमी नहीं आएगा। वह उतना ही रहेगा।

जैसे हम अपने आपको छोटा समझता है। किंतु वास्तव में हमारे भीतर जो अग्नि है वह प्रज्जवलित हो जाये तो तमाम संसार में फैल सकता है। अभी भी फैला हुआ है। इसी प्रकार हमारे शरीर के भीतर वायु है, यह भी तमाम सृष्टि के भीतर फैला हुआ है। इसी प्रकार हमारे शरीर के भीतर जल है, पृथ्वी है, वो भी इसी तरह फैला हुआ है। जैसे हम पृथ्वी को बाहर देखता है। तो कौन सी पृथ्वी को हमने पहचाना? क्या तुमसे बाहर जो पृथ्वी है उसको पहचाना? कौन सी पृथ्वी को पहचाना? गहराई से सोचने वाली बात है। क्या तुम्हारे अन्दर से बाहर की पृथ्वी को समझा? यह कभी भी बिल्कुल संभव नहीं हो सकता है। जो चीज तुम्हारे अंदर नहीं है, उसे तुम देख ही नहीं सकते। समझ ही नहीं सकते।

जिस पृथ्वी को तुम देख रहा, वह तुम्हारे अंदर छुपी हुई पृथ्वी ही है। पृथ्वी का दो शक्ल होता है, जैसे मैंने अग्नि का उदाहरण दिया था। जैसे एक मामूली अग्नि चारों ओर

फैल सकता है, फिर भी कम नहीं होता, उसी प्रकार पृथ्वी बहुत सूक्ष्म होने के बावजूद भी महान् बना रहता है। वास्तव में जिस पृथ्वी को हम देखते हैं, कहां से देखते हैं? बुद्धि के जरिए से हम पृथ्वी का अनुभव करते हैं। जो हमने यह पृथ्वी को अनुसंधान किया, यह किसके जरिए से किया? बुद्धि के अंदर पृथ्वी का अभाव मान लिया जाये तो उसका अनुसंधान कभी भी नहीं हो सकता है। यदि तुम जिस पृथ्वी को देख रहा वह बुद्धि से भिन्न होता तो कभी भी देख ही नहीं सकता। यदि तुम पृथ्वी को देख रहा है तो तुम उस पृथ्वी को देख रहा है जो तुम्हारे भीतर छुपा है। अन्यथा तो देख ही नहीं सकता। इसी प्रकार जल का भी ही हाल है। एक बूंद जल जिसे तुम कहते हो, वही समुद्र बन जाता है।

मैंने पहले भी कहा, हर पदार्थ गतिशील होता है। वह एक सैकिंड में सब जगह फैल जाता है। वही जल, एक बूँद जल फैल कर समुद्र बन जाता है। जब उसको समेट लेता है तो एक बूँद पानी निकलेगा। इससे ज्यादा कभी नहीं निकलेगा, किसी भी सूरत में नहीं। जैसे कुछ लोगों ने करके भी दिखाया। साईंटिस्टों ने हाइड्रोजन और आक्सीजन को अलग-2 करके दिखाया। दोनों को अलग करके दिखाया। दोनों को अलग करने से पानी का अस्तित्व ही सिद्ध नहीं होता। पानी ही नहीं रहता। वो जो हाइड्रोजन और आक्सीजन की शक्ल में खड़ा था, वह पानी ही था। अत: वास्तव में हम जिस जल को देख रहा वह सूक्ष्म रूप रूप में था। क्या वह हमारे शरीर से भिन्न या बुद्धि में छुपे हुए जल से भिन्न था? ऐसा कभी नहीं हो सकता।

वास्तव में यदि हमने जल तत्व को देखा तो हमारे भीतर छुपे हुए जल तत्व को यहीं देखा। वही व्यापक शक्ल में खड़ा हुआ है। इसी प्रकार अग्नि तत्व, मैंने पहले उदाहरण दिया जैसे दीवा, एक मामूली दीवा, तमाम जगह सर्वत्र संसार में फैलने के बावजूद उतना ही रहता है। उसमें कमी बेशी कुछ भी नहीं होता। जैसे यह पानी है, इसको सारी दुनिया इस्तेमाल करे, यह पानी उतना ही रहेगा। इसमें कमी नहीं होगा। पृथ्वी का भी वही हालत होता है, अग्नि का भी वही हालत होता है, वायु का भी वही हालत होता है। संसार में जितना जीव है, वह वायु ग्रहण भी करता है और छोड़ता भी है।

वास्तव में जिस वायु को हमने समझा, क्या हमसे भिन्न वायु को समझा? यह कभी भी संभव नहीं हो सकता। जो पदार्थ हमसे भिन्न होता है, उसे तुम कैसे समझ सकते हो? सृष्टि में जिस भी पदार्थ को हम समझता है वह हमसे अभिन्न होगा। भिन्न पदार्थ को हम समझ ही नहीं सकता, किसी भी सूरत में नहीं समझ सकता। अभिन्न होकर ही समझ

सकता है। अभिन्न वो होगा जो हमारे अन्दर रहता है। जो हमारे से बाहर है वह अभिन्न नहीं होगा। इससे सिद्ध होता है कि जिस वायु को हम देखता है, वह हमसे अभिन्न है। आकाश तत्व जिसे तुम कहता है, वह तो प्रत्यक्ष ही नज़र आता है। वह हमेशा अभिन्न रहता है, कभी भी भिन्न नहीं हो सकता। जो आकाश तत्व हमारे अंदर है, वो ही आकाश तत्व बाहर भी तुसी समझता है। तुम्हारे भीतर वह छोटा है, वास्तव में छोटा नहीं है। वही तमाम सृष्टि में संसार में फैला हुआ है। और कोई भी दूसरा आकाश सिद्ध नहीं होता है।

जिसे महत् तत्व कहा जाता है, मूल प्रकृति का अनुसंधान करते जाओ तो प्रत्यक्ष होगा कि जिन पदार्थों को हम बाहर देखता है, वास्तव में हम अपने अंदर के पदार्थों को ही देखता है। वे ही सृष्टि में व्यापक होंगे। हम सृष्टि से भिन्न नहीं हैं। न सृष्टि हमसे भिन्न है। कोई भी पदार्थ सृष्टि में हमसे भिन्न नहीं हो सकता। इसी से अभिन्न दृष्टि शुरू होती है। यही तत्व दृष्टि है, जब तक यह शुरु नहीं होगा, हमारा कभी भी कल्याण नहीं हो सकता। महान् जो दृष्टि है, महान् तुम कभी भी नहीं बन सकते यदि तुम सृष्टि से भिन्न हो। महान् वही हो सकता है जो तमाम सृष्टि, सब पदार्थों से अभिन्न हो।

इसी प्रकार हमने पंच तत्वों के मुतल्लिक कहा। इसी प्रकार सृष्टि के अंदर जितने भी पदार्थ हैं, ये कभी सिद्ध नहीं होंगे। क्या जो पदार्थ हमसे अलहदा है, वो कभी भी अलहदा सिद्ध हो सकता है? वह भिन्न हो तो उसे हम कभी समझ ही नहीं सकता। यदि हम भिन्न समझता है तो इसे ही अज्ञानावस्था कहा जाता है। वास्तव में भिन्न किसको समझा? अभिन्न पदार्थ को हमने भिन्न अवस्था में देखा। इसे ही अज्ञान कहा जाता है। क्या अज्ञान भी कोई मदूद है? अज्ञान के भीतर भी क्रिया है, क्रिया न हो तो अज्ञान काम ही नहीं कर सकता। जिसे हम अज्ञान कहता है वह भी व्यापक होगा। इसकी गति इतनी तेज़ है कि हम कोई अनुसंधान भी नहीं कर सकता है। कितना जबरदस्त स्पीड से यह फैल रहा है। तमाम संसार के अंदर अभिन्न-अवस्था से ही यह गति कायम रहता है।

दोनों में यह गति-समान रूप में रहती है। इसमें कोई फरक नहीं हो सकता। यदि कोई कहे कि हम अज्ञान को उठाकर फैंक देगा तो यह गलत बात है, क्योंकि यह हमसे अभिन्न पदार्थ है। अभिन्न न होता तो हमें भास ही नहीं सकता। यही हमारे अन्दर अज्ञान है, यह अभिन्न होकर ही सिद्ध हो सकता है। भिन्न होकर अज्ञान किसी भी सूरत में सिद्ध नहीं होता है। वास्तव में हम जिसे भिन्न कहता है, वह अभिन्न ही भिन्न की शकल में खड़ा हुआ है। जब हम अज्ञान को छोड़कर ज्ञान के अंदर आ जाता है तो अभिन्न कहते हो।

अभिन्न और भिन्न की शक्ल में जो खड़ा हुआ है वो वास्तव में एक ही पदार्थ है। वह क्या है? वह है क्रियाशीलता। भिन्न के भीतर भी क्रियाशीलता है वह व्यापक सिद्ध होगा इसलिए अज्ञान भी व्यापक है क्योंकि क्रिया-शक्ति की शक्ल में वह भी व्यापक है। वह कभी भी महदूद हो नहीं सकता। जिस प्रकार ज्ञान व्यापक है, अज्ञान भी व्यापक है। क्रिया की शक्ल में जो व्यापक है वह कभी भी मदूद नहीं हो सकता। ज्ञान भी क्रिया है और अज्ञान भी क्रिया है तो अज्ञान किसी भी सूरत में सिद्ध नहीं होता है।

अज्ञान किस को कहते हो, जो ज्ञान-भेद है उसे ही तो हम अज्ञान कहते हैं। अज्ञान का भी तो ज्ञान हमारे भीतर छुपा हुआ है। जिसे हम अज्ञान कहता है क्या उसका ज्ञान हमारे भीतर छुपा हुआ नहीं? अज्ञान को हम समझ ही नहीं रहे। यदि अज्ञान को हम समझ रहे हैं तो ज्ञान उसके अंदर छुपा होगा। इससे सिद्ध होता है कि अज्ञान के अंदर ज्ञान छुपा हुआ है और ज्ञान के अंदर अज्ञान छुपा हुआ है। ये दोनों परस्पर अभिन्न हैं। जैसे हमने पहले सिद्ध किया, इस सृष्टि के सारे पदार्थ अभिन्न हैं। इसी प्रकार ज्ञान अज्ञान अभिन्न होगा। व्याप्त और व्यापक अभिन्न होगा। कोई कहता ईश्वर व्यापक है, जीव व्याप्त है। झगड़ा बहुत चला हुआ है। जैसा पंडित जी ने कहा, शुद्धाद्वैत, विशिष्टाद्वैत, केवलाद्वैत। इसको गहराई से देखना होगा।

विशिष्टाद्वैती लोग तीन को मानता है, जैसे ईश्वर है, जीव है, सृष्टि है। केवल शंकराचार्य अपने अद्वैत में किसी पदार्थ को भिन्न नहीं मानता है। दूसरे ने कहा यह प्रकृति, पुरुष, जीव भिन्न रहता है। इसे विशिष्टाद्वैत कहते हैं। गहराई से देखो जिसे जीव कहता है, क्या वह ईश्वर से भिन्न है? किसी भी सूरत में भिन्न सिद्ध हो सकता है? ईश्वर से भिन्न जीव यदि मान लिया जाए तो जीव अनेक सिद्ध होगा। जो अनेक सिद्ध होगा, वह बनाया हुआ होगा। बनाने का सवाल कल्पना से सिद्ध होता है। बिना कल्पना के कोई चीज़ बन नहीं सकता। जब कल्पना हुआ तो बना। जो बना वह महदूद होगा। जो बनेगा वह नष्ट होगा। जीव का अनादित्व कभी भी सिद्ध नहीं होगा। यह शुद्धाद्वैतवादी भी है, जिसे माधवाचार्य ने कहा। वो कहता है यह बिल्कुल द्वैत ही द्वैत है। अद्वैत नाम की कोई चीज़ नहीं है। किंतु क्या यह हो सकता है कि सृष्टि के अंदर द्वैत ही द्वैत हो? यदि सारी जगह द्वैत ही द्वैत भरा हो तो सृष्टि का काम कभी भी नहीं चल सकता है। मैं यह सिद्ध कर सकता हूँ कि अद्वैत के बिना यह सृष्टि नहीं चल सकती।

सृष्टि के अंदर एक दूसरे के साथ संबंध हमेशा बना रहना पड़ेगा। जो कपड़ा हमने पहना हुआ है, उसमें हज़ारों लोगों का हाथ लगा हुआ है। यदि हम अभेदत्व को छोड़ दें तो यह कपड़ा कभी भी तैयार नहीं हो सकता। यदि कपड़ा तैयार होता है तो अभेद दृष्टि से ही तैयार होता है। भेद–दृष्टि से कपड़ा कभी भी तैयार नहीं हो सकता। इसी प्रकार सृष्टि में जितने भी पदार्थ नज़र आते हैं, यह अभेद–दृष्टि से तैयार हुआ है। भेद–दृष्टि हो तो एक दूसरे के साथ कभी भी प्रेम नहीं कर सकता। एक दूसरे को देख भी नहीं सकेगा। एक दूसरे को जीने भी नहीं देगा। यह निश्चित समझ लो।

क्या भेद–दृष्टि से संसार चल सकता है? यह कभी भी नहीं चल सकता है। यदि इस सृष्टि की जड़ में कोई पदार्थ है तो वह अभेद–दृष्टि ही है। अभेदावस्था ही इसकी जड़ में छुपा हुआ है। तभी यह कायम है। यदि अभेदावस्था को इसके अंदर से उठाकर तुम फेंक दो तो यह दृष्टि एक सैकिंड में खत्म हो जायेगी। अभेद–दृष्टि ही एकमात्र सिद्ध होता है। बाकी कल्पना किया है हमने। किंतु वह किसी भी तरह सिद्ध नहीं होगा। यह मानने योग्य भी नहीं है। जीव को अनादित्व मान लिया, एकदेशीय मान लिया तो जीव का उपादान कारण क्या है? किसके ज़रिए से वह बना हुआ है? यदि ईश्वर का टुकड़ा उसे मान लिया जाये, क्या ईश्वर का टुकड़ा हो सकता है? जैसा तुलसीदास ने कहा ईश्वर अविनाशी और जीव उसका अंश। थोड़ी देर के लिए जीव को ईश्वर का अंश मान भी लिया जाये तो जीव का अंश जरूर ईश्वर बन जायेगा।

यदि ईश्वर का अंश जीव है, अंश अंशी भाव मान लिया जाये तो जीव का अंश ईश्वर होगा। परस्पर का भाव होगा न। बिना परस्पर के तो हो नहीं सकता। दूसरा एक प्वाईंट यह है कि जब से सृष्टि बना है और जीव ही जीव बनता चला गया तो फिर ईश्वर कभी भी सिद्ध नहीं होगा। सारे ही जीव हो गया तो ईश्वर कहां से आयेगा? सारे जीव बन गया। यह लता, वृक्ष, पशु–पक्षी, कीड़े पतंगे सारी चीजें जीव हैं। फिर ईश्वर कहां से आएगा? सारे तो सारे जीव बन गया। टुकड़ा–टुकड़ा हो गया। टुकड़ा जो हो सकता है, वह टुकड़ा हो जायेगा। वह नष्ट हो जायेगा। जरूरी नष्ट हो जायेगा। यदि ईश्वर से भिन्न जीव को टुकड़ा मान लिया जाये तो वह ईश्वर खत्म हो चुका है। न वह जीव ही बचेगा। हमारे कहने का मतलब है कि यह अभेद–दृष्टि स्वयं सिद्ध चीज़ है। इसी अभेद–दृष्टि से शांति मिल सकता है। हम सृष्टि से अभिन्न और सृष्टि हमसे अभिन्न होगा। तब जाकर हमें शांति मिल जायेगा। मैंने उदाहरण

के तौर पर यह सिद्ध किया कि जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी, आकाश ये जितने भी प्रतीत होते हैं, सब हमसे अभिन्न हैं। भिन्न कभी भी नहीं होगा।

अब इस अभिन्नावस्था को प्राप्त करने के लिए हम भिन्न-2 तरह से कोशिश करता आया। अनेक ढकोसला से हम को शिक्षा देने की कोशिश किया। गहराई से देखो तो यह स्वंय सिद्ध है। हर कोई यही चाहता है। भिन्नत्व कौन चाहता है? कभी भी नहीं चाहेगा, हमेशा हम अभिन्नत्व भाव से सोचेंगे, हर कोई यह चाहेगा कि सब कोई हमसे अभिन्न व्यवहार करे। अपने जैसा व्यवहार दूसरे भी हमसे करे। जैसे तुम यह चाहता है कि साधु हमसे ऐसा व्यवहार करे, जैसा हम चाहते हैं, हम चाहते हैं, वैसा व्यवहार करे। है कि नहीं? हम भी ऐसा चाहते हैं कि यह सृष्टि सारी ऐसा व्यवहार करे, जैसा हम चाहते हैं। सारी दुनिया की हालत यही है।

अभिन्न दृष्टि न हो तो यह भाव कभी पैदा हो ही नहीं सकता। जैसे इस सृष्टि के अंदर सारे मनुष्य हैं, ये सुखी रहना चाहेगा। दुःख से निवृत्ति चाहेगा। हमेशा शांति चाहेगा। किसी से क्रोध नहीं करना चाहेगा और जितनी भी ये बुराई है, चोरी चपारी है, ठगी, बेईमानी इत्यादि। कोई हमसे चोरी करे ऐसा हम नहीं चाहेगा। यह हम बिल्कुल नहीं चाहता है क्योंकि यह भेद-दृष्टि है। हम अभेद चाहता है। हर कोई ये चाहेगा कि हमारे साथ ही व्यवहार करे जैसा हम उनसे चाहता है। इसी अभेद-दृष्टि से शांति मिल सकती है। वास्तव में यह जो अभेद-दृष्टि है, यह स्वयं सिद्ध है। यह बनावटी नहीं।

तुम एक जगह बैठकर विचार करो-यह मन जो संसार में घूम सकता है, यह अभेद-दृष्टि के कारण ही संभव है। सब जगह यह मन चाहते हुए भी, न चाहते हुए भी पहुँच जाता है। यह अभेद-दृष्टि के कारण ही होता है। अभेद-दृष्टि होने से वह समान-रूप से सर्वत्र पहुँच जाता है। उसे रोकने वाला कोई नहीं? इसको रोकने वाली यदि कोई शक्ति है तो वह ही है, वह मन के अंदर ही छुपी हुई है। वह बाहर नहीं है। किंतु तुम बाहर के किसी भी पदार्थ से मन को रोकने की कोशिश करो, यह कभी भी नहीं हो सकता। वह तमाम संसार में बिल्कुल निर्बाध गति से जाएगा। उस पर कोई बादशाह कंट्रोल नहीं कर सकता। कोई राजा उस पर कोई कंट्रोल नहीं कर सकता है। वह इतना प्रबल रूप से, अभेद-दृष्टि से, वह तमाम संसार में मिला रहता है, विचरण करता है। उसे कोई रोक नहीं सकता। उसका अभेद-भाव इतना पक्का है, इतना दृढ़ है। जो मनुष्य मन की इस हालत को समझ लेगा, वह भी अभेद हो जायेगा, अभिन्न हो जायेगा। महदूद हो जाएगा तो रोग द्वैष पैदा होगा।

संसार में जितने भी रागद्वेष हैं, वैर है, ये सब भेद – दृष्टि से होगा, भिन्न दृष्टि से पैदा होता है। अभेद – दृष्टि से ये भी कभी पैदा नहीं होगा।

अभिन्न – दृष्टि ही वास्तव में दृष्टि है। भेद – दृष्टि जो है, वह दृष्टि कभी भी नहीं। उसको कुदृष्टि कह सकते हो। मगर इस कुदृष्टि में भी वही चैतन्य काम करता है। मैंने पहले अज्ञान के मुतल्लिक कहा। जैसे अज्ञान को खत्म नहीं किया जा सकता है। अज्ञान की शक्ल में हम उसे बुरा कहें, किंतु क्रिया की शक्ल में वह बुरा बुरा कुछ भी नहीं है। इसी प्रकार जिस चीज़ को हम बुरा कहता है, कुछ देर उसे बुरा कह सकते हो, किंतु क्रिया की दृष्टि से तो वह कभी भी बुरा नहीं होगा। बिना चैतन्य के बुराई कोई कर सकता है? यह बुराई तुम को कोई कहां भासता है? जहां चैतन्य होगा वहीं बुराई भासेगा न? जहां चैतन्यता नहीं, वहां बुराई भासेगा? कभी भी नहीं। इससे सिद्ध होता है कि बिना चैतन्य के बुराई कभी भी सिद्ध नहीं होगा। अच्छाई भी उसी से सिद्ध होता है, बुराई भी उसी से सिद्ध होता है। बुराई और अच्छाई दोनों में काम करने वाली यह चैतन्य – शक्ति है इसमें कोई भी भेद नहीं है, अभेद – दृष्टि है। उसके अंदर न ज्ञान है, न अज्ञान है।

ये ज्ञानाभिमान भी उसके अंदर नहीं है। फिर क्या? एक चैतन्य – शक्ति है, अभिन्न – दृष्टि है। तमाम संसार के अंदर अभिन्न – भाव से रहने वाला वह चैतन्य – शक्ति है। वही बचा रहता है वही यथार्थ स्थान है। वही शांति मिल सकता है, अन्यत्र कहीं भी शांति नहीं मिल सकता चाहे किसी भी देश विशेष जाओ, लंदन जाओ, स्वर्ग में जाओ, नरक में जाओ, किसी भी जगह में जाओ। जिस जगह को ये बैकुण्ठ कहता है वहां जाओ, यह सूक्ष्म शरीर वहां मौजूद होगा। वहां भी चैन नहीं मिलेगा। जो वहां जाएगा, वहां चैन नहीं मिलेगा, वहां से वापस आएगा। आए बिना रह नहीं सकता है।

सो हमारे कहने का मतलब है कि यथार्थ जो दृष्टि है, वह अभेद – दृष्टि है, वह बैकृण्ठ हो, कैलाश हो, कुछ भी हो, वह हमसे भिन्न कुछ भी नहीं हो सकता। जितने सृष्टि के अन्दर पदार्थ तुम्हें प्रतीत होते हैं वो इस शरीर के भीतर मौजूद मिलेगा। जैसे एटम का अनुसंधान है, इसका अनुसंधान है, अनुसंधान है, इसका अनुसंधान इस शरीर के भीतर पहले ही किया हुआ है। वह बुद्धि के अंदर लय रहता है। यह तमाम सृष्टि के अंदर जो गतिशीलता प्रतीत होता है, इसको गहराई से समझना होगा। मन के अंदर जो गतिशीलता है, वही बाहर गतिशीलता है। आकाश, वायु, अग्नि, जल पृथ्वी जितने भी गतिशील पदार्थ है, ये किसके ज़रिए से तुहानू गतिशील प्रतीत होता है? ये यूरोपियनों ने, सांइटिस्टों ने जिसे ।जजतंबजपवद

च्यूमत कहा है, एक दूसरे को खींच कर रखता है, ये ।जजतंबजपवद च्यूमत किसके ज़रिए से तैयार होता है?

"यह सृष्टि में, ज़मीन में जो गति नज़र आता है, यह किसके ज़रिए से होता है? इसे गहराई से सोचना होगा, यह मन के ज़रिए से पैदा होता है। बिना ज़रिए के यह गतिशीलता कभी भी सिद्ध नहीं होगा। सो गहराई से देखने पर पता चलेगा, यह मन के ज़रिए ही पैदा होती है। यही पृथ्वी के अंदर की शक्ल में पानी के अंदर गति की शक्ल में, आकाश के अंदर गति की शक्ल में, अग्नि के अन्दर गति की शक्ल में, महत् भिन्न-भिन्न पदार्थों में जो गति की शक्ल में प्रतीत होती है, यह मन स्थिर हो जाये, मनुष्य मन को कंट्रोल कर ले तो सृष्टि खत्म हो जाती है, सृष्टि रहती ही नहीं। वह कभी रह सकती है? जब तक हमारा मन चंचल न हो, सृष्टि कभी भी नहीं भासेगा। मन चंचल होगा तो सृष्टि भासेगा। जैसे सुषुप्ति-अवस्था में मन स्थिर होने पर तो सृष्टि बिल्कुल भी नहीं भासता। किसी भी प्रकार नहीं भासता। क्यों नहीं भासता है? क्योंकि वहां मन लय रहता है। मन लय रहने की वजह से भासता नहीं है। इसके विपरीत जिस समय मन चंचल हो जाता तो सृष्टि भासने लगता है।

तो यह सृष्टि के अंदर गति किसके ज़रिए से होता है? गहराई से सोचना चाहिए। वास्तव में यह मन की गति ही सृष्टि में गति के रूप में प्रतीत होता है। लेकिन वह गति मन का नहीं है। मन के पीछे भी एक शक्ति काम कर रही है जो मन को कंट्रोल करती है। वास्तव में वह शक्ति मन की नहीं है, वो चैतन्य की है। मन के साथ मिल कर जब वह हरकत करती है, तब गीतशील हो जाती है। जिस समय मन, बुद्धि समझ लो, चैतन्य इनके साथ हो जाता है तो उसका नाम शक्ति हो जाता तो उसी संबंध का नाम शक्ति हो जाता है। उसी संबंध का नाम शक्ति है। इसी शक्ति के ज़रिए तमाम सृष्टि चल रही है। यह मन ही सृष्टि की शक्ल में खड़ा हुआ है। जितनी भी गतिशीलता है, यह सब मन के ज़रिए है।

यदि कोई इस मन को कंट्रोल कर ले, समर्थ हो जाये तो वह इस सृष्टि की गति को भी रोक सकता है। जैसे प्रलय काल में सृष्टि खत्म हो जाती है या प्रलयकाल में ब्रह्मा जी इस सृष्टि को लय करता है। वह किस के ज़रिए से लय करता है? वह यही तरीका होता है, मन को कंट्रोल करने से, मन की गति रोक लें तो सृष्टि भी खत्म हो जाएगा। ब्रह्मा जी ने सब सृष्टि को उत्पन्न किया तो कहां से किया? आखिर ये संकल्य कहां से उठा? तो देखने से पता चला कि यह संकल्प मन बुद्धि से उठा और कहीं से भी

नहीं उठा। तो इस मन बुद्धि के अंदर ही यह गति छुपी हुई है। उसी से यह पैदा हुआ है। उसी ने यह गति सब में बनाया है। वायु में बनाया है, अग्नि में बनाया है, सबकी गति सब में बनाया है।

इस रहस्य को कोई समझ ले तो इस सृष्टि की गति को तुम खुद रोक सकते हो। यह है बड़ा विचित्र तमाशा। सृष्टि के अंदर जितनी क्रियाशीलता है, क्रिया शक्ति है, यह सब मन के ज़रिए से होता है। इस मन को हम देखने की कोशिश नहीं करता है। इसके अंदर कितनी शक्ति है, क्या हरकत करता है, यह सब मन के ज़रिए से होता है। इसके मुताल्लिक कभी सोचा भी नहीं। हम तो ऊपर ही ऊपर करी जाता है। हम सोचता है, यह गतिशीलता है। जैसा मैने कहा, साइंटिस्ट है, वैज्ञानिक है, ।जजतंबजपवद च्वूमत है, यह पावर है, वह पावर है। ।जजतंबजपवद च्वूमत को यह गतिशीलता किसने दिया? यह सवाल खड़ा हो जायेगा। यह एक दूसरे को कैसे खेंचता है, एक दूसरे को आकर्षित करता है। वह आकर्षण किसके ज़रिए से होता है? कौन है वह आकर्षण कराने वाला पदार्थ? इसके मुतल्लिक गहराई से सोचा नहीं।

गहराई से न सोचने की वजह से चक्कर में हम पड़ जाता है वास्तव में देखने पर पता चलेगा, यह सारी सृष्टि मन के ज़रिए से चलती है। मन से ही यह सारा संसार गतिशील हो रहा है। चाहे मोहम्दन्स का सिद्धान्त ले लो, क्रिश्चियन का सिद्धांत ले लो और भी जितनी फिलासफी संसार के अंदर है, मन को लिए बिना यह सृष्टि सिद्ध नहीं हो सकती।

जिसने भी कहा, मुसलमान ने कहा, खुदा ने कहा या ब्रह्मा ने कहा सृष्टि बन जाओ। आकाश बन जाओ, यह ज़मीन बन जाओ। जब कहा है तो कल्पना है। कल्पना है तो यह मन की ही क्रिया है और कुछ नहीं। इस प्रकार संसार में जितने भी सिद्धांत हैं, वे सब मन को ही तोड़ मोड़ कर कहता है। इसके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। जब तक इस मन के रहस्य को नहीं समझेगा, कामयाबी नहीं होगी। जब इस मन को कंट्रोल कर लेगा तो बहुत बड़ा भारी सिद्धि होगी। ये अष्ट सिद्धि वगैरह सबी इसी के ज़रिए होती है। ये सृष्टि, स्थिति, संहार, सब इसी के ज़रिए होता है। इसी के भीतर छुपा हुआ है। हम अभी भी वही कर रहे हैं ना? सवेरे से शाम तक यह क्रिया चला हुआ है।

इस रहस्य को समझना चाहिए। अभी हम ये बोलने लगा, बोलने लगा तो ये सृष्टि है, बोलता रहा तो यह स्थिति है, बोलना बंद कर दिया तो संहार है। इस तरह यह

सृष्टि, स्थिति, संहार हर सैकिंड पर हो रहा है। एक सैकिंड पर भी बंद नहीं होता। इसका अर्थ है हर मनुष्य हर सैकिण्ड सृष्टि संहार कर रहा है। वह एक सैकिंड के लिए ही बंद नहीं हो रहा है।

हमारे पौरोणिक लोगों ने कहा कि यह सृष्टि, स्थिति, संहार ब्रह्मा, विष्णु, महेश कर रहा है। तो वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश हमारे ही भीतर बैठ कर वो ही काम कर रहा है और कौन करता है? यदि ब्रह्मा, विष्णु, महेश ही सृष्टि, स्थिति, संहार का मालिक है तो हमारे भीतर बैठकर, सृष्टि, स्थिति, संहार कौन कर रहा है? इस से सिद्ध होता है कि हमारे भीतर ही वह तीनों शक्ल में बैठा हुआ है और कोई हो ही नहीं सकता। जब यह क्रिया नहीं होती है तो यह मन ही मोहरे आ जाता है और कोई हो ही नहीं सकता। इस प्रकार जगत के किसी भी पदार्थ के बारे में विचार लो।

मृत्यु क्या कोई व्यापक पदार्थ है या व्याप्त। वह व्याप्त नहीं हो सकता, व्यापक है। जो पदार्थ व्यापक है उसमें गतिशीलता होगी। ऐसा कोई समय नहीं हो सकता है जब मृत्यु नहीं हो रही है। जैसे तुम हर सैकिंड पर मर रहे हो, ऐसे ही यह तमाम सृष्टि हर सैकिंड मर रही है। यह रुक नहीं सकता है। मृत्यु एक व्यक्ति पर नहीं आती है। मृत्यु एक समष्टिगत प्रक्रिया है। वह सब जगह पर समान-रूप से रहता है। वह तुम्हारे अंदर भी है। तुम्हारे अंदर जो मृत्यु है वह सारे संसार में फैला हुआ है। वह हर सैकिंड पर है। वह एक सैकिंड भी बंद नहीं होगा। वह व्यापक होगा, कभी महदूद नहीं हो सकता। उसके अंदर बड़ा भारी गतिशीलता है।

जिस प्रकार जीवन में गति है, उसमें भी है। यदि उसमें गति न हो तो वह कभी मृत्यु हो ही नहीं सकती। जिस चीज में गीत नहीं है, वह कभी सिद्ध हो ही नहीं सकती। यदि मृत्यु सिद्ध होती है तो उसमें गतिशीलता मानना होगा। क्योंकि, वह सर्वत्र भरी हुई है। जो तुम्हारे अंदर मृत्यु है, वही तमाम संसार में फैली हुई है। जिसे तुम काल-भगवान् कहते हो, जो काल-भगवान् तुम्हारे अंदर फैला हुआ है, वही काल-भगवान् सर्वत्र फैला हुआ है। और कोई काल भगवान् नहीं है। कहने का मतलब है तुम हर विषयों को गहराई से अरुसंधान करो तो एक अभेद तुहानू मिल जाएगा। एक अभिन्न-दृष्टि मिल जाएगा। यह अभिन्न-दृष्टि ही यथार्थ में हमारा लक्ष्य है। यह जब तक नहीं मिलता तभी एक अशांति है।

अभिन्न-दृष्टि के बिना मनुष्य जीवन भी कभी सफलीभूत नहीं हो सकता। यह अभिन्न-दृष्टि मनुष्य ही प्राप्त कर सकता है। वैसे अभेद की इच्छा प्रत्येक जीव रखता है। मगर कामयाबी नहीं मिलती मनुष्य योनि ही ऐसी अवस्था है जहां हम अभिन्न-दृष्टि को समझ सकते हैं। इसमें स्थिरता प्राप्त कर सकते हैं। इस अभिन्न-दृष्टि को प्राप्त करने के लिए ही बड़े-बड़े शास्त्रों की जरूरत पड़ी। भिन्न-दृष्टि के लिए शास्त्र की क्या ज़रूरत है? हम जन्म से भिन्न सिद्ध करते आए हैं। यदि शास्त्र की जरूरत पड़ी तो इस अभेद दृष्टि को समझाने के लिए ही पड़ी।

वास्तव में यह स्वयं सिद्ध होने के बावजूद भी, हम भेदभाव से भरा होने के कारण हमें उसका पता नहीं चलता। उसे समझाने के लिए शास्त्र की जरूरत पड़ी। यह अभेद-दृष्टि ही यथार्थ दृष्टि है। हमारी जो दृष्टि है, वह भेद-दृष्टि है। यह भेद-दृष्टि ही उपद्रव का कारण है। तमाम संसार के अंदर जितने भी उपद्रव हैं, विकार हैं, उसकी जड़ के अंदर देखें तो यह भेद-दृष्टि ही है। जिसकी यदि भेद-दृष्टि खत्म हो जाये उसको कोई उपद्रव नहीं होगा। वह बिल्कुल शांत होगा। उसको खुद को भी शांति मिलेगी औरों को भी शांति प्रदान करता रहेगा। क्योंकि, उसका प्रभाव तमाम संसार में फैलता है। फैले बिना रह ही नहीं सकता क्योंकि यह दृष्टि हमारे अंदर है। किसी कारण दबा हुआ है। उसे जागृत करने की आवश्यकता है। जागृत भी नहीं करना है मगर उस जागृत अंदर पड़ी हुई रुकावट को दूर करने की कोशिश करना है।

जब वह रुकावट दूर हो गया तो वह स्वयंसिद्ध है। अभेदावस्था हमारी स्वयंसिद्ध चीज़ है। उसे कहीं से प्राप्त करने की कोई ज़रूरत नहीं है। वह हमारे अंदर मौजूद है। लेकिन हम समझ नहीं रहे हैं। उसे समझाने के लिए भिन्न-भिन्न शास्त्र और लोगों ने कोशिश किया है। यदि हम समझ जाएं तो कल्याण है। नहीं तो अकल्याण है। इसलिए हमारे कहने का मतलब है कि कल्याण प्राप्त करना चाहते हो तो अभेद-दृष्टि को प्राप्त करो। इसी में कल्याण है।

– ॐ –